सिकन्दर

दृश्य

एक सादे स्क्रीन पर हिन्दुस्तान का स्याह-सफेद रिलीफ कैम्प। यह स्क्रीन बीच में से खुलता है और दोनों किनारों पर एक-एक पुली के जरिये खींचा जा सकता है।

नाटक के आरम्भ में स्टेज पर कम-से-कम रोशनी होती है, लेकिन जैसे रंगा का पूर्वालाप आगे बढ़ता है, पूरा रंगमंच रोशनी से भरा-पूरा हो जाता है और हॉल की बत्तियाँ क्रमशः बुझा दी जाती हैं।

ा : (युवक और सुन्दर, लेकिन जैसे समयहीन अनंतता का पथिक सम्पूर्ण और तटस्थ। एक रेशमी फूलदार अचकन, साफे और चटकीले चौड़े कमरबन्द में वस्त्रित। परदा उठते ही शुरू कर देता है।) हिन्दुस्तान का नक्शा एक कहानी है। हर नदी उसका एक परिच्छेद है और हर सड़क और कूचा एक वर्क, उसका

इतिहास एक अनन्त अगम आरम्भ है। (धीमा मुखर संगीत शुरू होता है।)

इस इतिहास को चाहे ईसा के पाँच हजार वर्ष पहले से शुरू कीजिए, चाहे अदन की वाटिका के समय से। हिन्दुस्तानी की की इतिहास-बुद्धि में कोई भी अन्तर नहीं उपजता। उसके देवता और योद्धा, समय और सभ्यता की सहज चेतना से परे हैं, उसकी संस्कृति चाहे आदिमानव की धरोहर हो या चाहे उसमें सभ्य होने के लिए लाखों वर्षों की तीव्र लोलुपता अभी उपजी ही न हो—हिन्दुस्तानी का सर्पाहत अभिमान अपनी श्रेष्ठता का अभिप्राय नहीं छोड़ पाता। (संगीत की एक तीखी लहर चिहुँक पड़ती है।)

इसका आकाश नीला और भारहीन है और गोरे और उच्चाकांक्षी मनुपुत्रों को काला और निराश कर देनेवाला सूर्य पूरी दैहिक और अतिदैहिक जिन्दगी को अपने मातहत रखता है। वह हजारों रंग पैदा करता है, अनगिनत अनाज उपजाता है और मनुष्य, मनुष्य के एक जीवन की कटुता और असफलताओं के लिए चौरासी लाख बहाने देता है। (संगीत एकबारगी चुक जाता है।) ऐसा हिन्दोस्तान जिसके वेगहीन, स्वप्नहीन आकाश के नीचे सैकड़ों जातियाँ आयीं और उसके नियम में घुल-बस गयीं।

यहाँ विदेशी कौन है?····जिन्होंने किसी भी देश के जाग्रत अभय में ऐसी सुरुचि और सुगमता से अपना स्थान नहीं बनाया, जैसे मन में एक विचार घर कर लेता है।
गोरे, सुडौल नाकोंवाले आर्य।
ठिगने, काले और मृत्यु के दार्शनिक वत्स्य!
लोक-लोलुप दरद !!!
चौकन्ने चिपटी खोपड़ियों के चतुर मंगोल !!!!
और इतिहास के संधि-यौवन की संतान यूनानी!! !!

(पर्दा उठता है और सिकन्दर दाखिल होता है। युवक, सुन्दर, लेकिन एक अज्ञात और अनहोने भय का शिकार, जैसे इस अनजाने भय को आगे ठेले हुए सारी धरती पर फिर रहा है।

वह शराब के नशे में चूर है और अचानक रंगा से टकरा जाता है।)

सिकन्दर : तुम कौन हो? और क्या सुबह-ही-सुबह तुम नशे से बेहाल हो रहे हो?

रंगा : (सरलता से मुस्कराते हुए) तुम सिकन्दर हो....फिलिप्पा के पुत्र। हजारों मील और सैकड़ों वर्ष दूर से, जहाँ तुम्हारा घर है, तुमने अपनी यात्रा शुरू की थी। फिर क्या सबब कि तुम अपनी यात्रा का उद्देश्य भूल गये·······।

सिकन्दर : (असन्तोष से) मैं ऊब गया हूँ। मैं बेहद ऊब गया हूँ। मैं अपने बारे में सुनते-समझते मूढ़ हो चला हूँ। मैं अब किसी और के बारे में सुनना-समझना चाहता हूँ। थायस एक गहरे कुएँ की तरह है। मैं जब भी उसके पातालभेदी अंधकार को पुकारता हूँ, मुझे सिर्फ अपनी ही प्रतिध्वनि सुनायी देती है। मैं अपनी ही प्रतिध्वनि से कई बार हार चुका हूँ। यह पूरा संसार एक अन्धेरा कुआँ है। इसलिए मैं (अचानक उसके सीने पर उंगली टेक देता है) तुम्हें देखना चाहता हूँ। उतना और उस तरह जितना और जैसे आज तक किसी ने तुम्हें न देखा हो। (फुसलाते हुए) तुम्हें अपने आपको तुरन्त जाहिर कर देना चाहिए—पूरा-पूरा और बिना उद्देश्य के। तुम कहते हो, मैं अपनी यात्रा का उद्देश्य भूल गया? मैं कहाँ भूला, लेकिन मैं उसे भूलना चाहता हूँ। काश! सिर्फ एक व्यक्ति मुझे अपने अन्तर में देख लेने दे तो मैं—मैं कहता हूँ—संसार-विजयी सिकन्दर के सामने तुम अपना और अपनी असंख्य पूर्व पीढ़ियों का धूल और पसीने से सिसकता हुआ अन्धकार खोकर पछताओगे नहीं।

रंगा : तुम जानते हो, मैं कौन हूँ?

सिकन्दर : नहीं। लेकिन जानना चाहता हूँ। तुम जिस देश को पसन्द करोगे मैं उसे तुम्हारे लिए जीत दूँगा।

रंगा : सिकन्दर!

सिकन्दर : मैं तुम्हें पूरी सात घड़ी कत्लेआम की भी इज़ाजत दे सकता हूँ। सोचो, सात घड़ियों में कितना खून बहाया जा सकता है····जीवन के मर्म के कितना निकट आया जा सकता है?

रंगा : (हताश और भयभीत) तो जीवन के निकट आने का तुम्हारा उपाय यह है!

सिकन्दर : क्या अरस्तू की तरह तुम भी खून के अकाट्य दर्शन को नहीं

समझ पाते ? मालूम होता है, तुम भी क्षीण मन और शब्दों के गुलाम हो। (ताली बजाकर) मैं थोड़ी-सी शराब चाहता हूँ।

रंगा : (विंग में लोप होते हुए) अच्छा ही हुआ सिकन्दर, तुमने मुझे नहीं जाना, क्योंकि मैं तुम्हारा जनक हूँ, तुम्हारा इतिहास। क्या जाने मुझे जानकर तुम जीवन के किस मर्म को खोजने निकल पड़ते। (ठठाकर हँसता है।)

सिकन्दर : (चौंककर) इतिहास ! अरस्तू कहता है कि इतिहास मुझे इतना ही जानेगा कि मैंने इतनी ही शराब पीकर भी अपने आपको अपनी माँ के षडयन्त्रों से सुरक्षित रखा। अरस्तू दुःखी है। उसका मन तो हमारे देवताओं की तरह है, लेकिन उसका शरीर कमज़ोर बदसूरत है। उसकी आँखों में न लालसा है और न उसके मन में एक विकल हिंसा, लेकिन शायद अरस्तू ही सही हो।········सचमुच संसार-विजय करना उतना ही थकानेवाला रोजगार है, जैसा अथीनो के शहर में एक मांस की दुकान रखना। (चिल्लाता है) और वह शराब कहाँ है ? मैं एक जमाने से कुछ थोड़ी-सी शराब चाहता हूँ और वह मुझे नहीं मिल रही। जैसे मैं संसार-विजयी नहीं, उसकी छावनी का एक अदना भिखारी कवि हूँ।

(एक ईरानी गुलाम सफेद याक के सींग में मदिरा लाता है।)

सिकन्दर : (उसे एक घूँट करके) यह है एक सच्चा मित्र। ऐसा मित्र, जिसे तुम्हारी मित्रता से कोई लाभ नहीं, कोई प्रयोजन नहीं, कोई उत्साह नहीं, ····कोई ·· (गुलाम की ओर तेजी से मुड़कर) तू मेरी तरफ इस तरह क्यों देख रहा है ?

ईरानी गुलाम : (त्रस्त) मैं -अभी-अभी एक बड़ा सुन्दर स्वप्न देख रहा था। वह बहुत कुछ इस तरह था····।

सिकन्दर : चुप रहो, मैं स्वप्नों से कोई सरोकार नहीं रखना चाहता। चाहे वे संसार-विजेता के स्वप्न हों या उसके गुलाम के स्वप्न, सब एक-से होते हैं। (जैसे उसे कोई बड़ी राज़ की बात बता रहा हो) और सच तो यह है कि स्वप्न विजित और विजेता, सम्राट् और गुलाम का सारा भेद मिटा देते हैं। स्वप्न देवताओं के शत्रु हैं।

(एक यूनानी सेनानी तेजी से प्रवेश करता है।)

सेनानी : नगर के उत्तर में पड़ी हुई फौजें बागी हो गयीं। वह हेडफसीज को पार कर चुकी हैं और उत्तर की तरफ रुख किये हैं····

सिकन्दर : वह उत्तर की तरफ रुख क्यों न करें ? तुम मुझे कोई भी कारण बता सकते हो कि वह दक्षिण की तरफ मुड़ जाएँ ?

सेनानी : लेकिन वह बागी जो हैं। उन्होंने भगवान के मन्दिर के प्रसाद का खुलेआम तिरस्कार किया है। उन्होंने अपनी सेना के ध्वजवाहक सफेद घोड़े को मारकर खा लिया है।

सिकन्दर : मेरे मित्र, अभी तुम्हारे आने से एक पल पहले मैं किसी से कह रहा था कि स्वप्न देवताओं के शत्रु होते हैं। यह तुम्हारा स्वप्न खासतौर से भगवान का शत्रु मालूम होता है····तुम्हें जिस चीज की जरूरत है, वह है थोड़ी-सी शराब····।

सेनानी : (कड़ाई से) सिकन्दर दारा का शत्रु और मनु देश का विजेता। क्या तू असंख्य पहाड़ों और अनगिनत नदियों के पार हमें इसीलिए लाया था ? क्या इसीलिए तूने हमारे नगर के बुद्ध और विश्वसनीय देवताओं का मज़ाक उड़ाया था ? क्या इसीलिए तू हमें धरती के उन छोरों पर ले गया, जहाँ पृथ्वी, जल और बादलों का चिरमर्यादित संघर्ष हो रहा है ? सिकन्दर, क्या तूने उस देश की कल्पना––जहाँ आंधियाँ विश्राम करती हैं और रंग उपजता है····हमारे अन्दर इसीलिए की कि हम इस देश में आकर अर्धनियों के हाथ इस तरह हलाक हों ? यह पर्सपोलिस और बल्तरी का सिकन्दर कहाँ है ?

सिकन्दर : तुम ठीक कहते हो, मेरे मित्र, हमें उस सिकन्दर की तलाश करनी चाहिए। दूर-दराज़ देशों में जहाँ हमारी परछाइयों के सिवा हमारा कोई साथी न हो, जहाँ हमारे घोड़ों की पूँछों के सिवा हमारे पास कोई चाबुक न हो, जहाँ हमारे मांस के लालच में हमारा पीछा करनेवाले गिद्धों के सिवा हमारी कोई ध्वजाएँ न हों, वहाँ उस सिकन्दर की हमें तलाश करनी चाहिए।

(यूनानी सेना का एक दूसरा सेनानी घबराया हुआ प्रवेश करता है।)

दूसरा सेनानी : नगर के ब्राह्मणों ने अनाज और मांस से लदी हुई हमारी सत्रह नावें डुबो दीं।

सिकन्दर : जब सिर्फ एक नाव रह जाए, तब मुझे खबर करना। मैं अपनी

यात्रा के लिए तैयार हूँ ?

दूसरा सेनानी : लेकिन हमने उनके नेताओं को पकड़ लिया ।

सिकन्दर : तुमने उन्हें मौत की परम विश्वसनीय हिरासत में क्यों नहीं दिया ?

दूसरा सेनानी : वह लड़ते कहाँ हैं ?

सिकन्दर : (सहसा मुदित होकर) तो उन्होंने हमारी नावें इसलिए डुबोयी हैं कि उन्हें हमारा जाना पसन्द नहीं है ? अपनी असंसारी बुद्धि-मानी से उन्होंने मेरे संसारी अवसाद को ठग लिया।

पहला सेनानी : ओ सिकन्दर, यह तुझे क्या हो गया ? वह हमें गारत करना चाहते हैं.........।

दूसरा सेनानी : तू देख तो, वह कितने अभिमानी और गब्बर हैं और किस दार्श-निक कुटिलता और निर्दयता से हमारा विनाश चाहते हैं ।
(बाहर जाता है और सात ब्राह्मण कैदियों के साथ फिर प्रवेश करता है । उनके पीछे-पीछे सिकन्दर की छावनी का यूनानी दार्शनिक है ।)

सिकन्दर : ब्राह्मणो, मैं सोचता हूँ कि तुम्हें मेरा मित्र होना चाहिए। तुम्हारा आदर्श है, संसार का त्याग और मेरा संसार-विजय। अगर अरस्तू यहाँ होता तो तुम्हें कायल कर देता कि हम दोनों एक ही विचार की, एक ही देवता की सन्तान हैं ।

मैं जानता हूँ कि वह बहुत कुछ जो तुम जानते हो, अरस्तू नहीं जानता । वह तुम्हारे हसीन और हँसमुख देवता नहीं जानते । वह तुम्हारी तरह देवियों की रुद्र-गम्भीर कल्पना भी नहीं कर सकता । वह मेरे बारे में भी गलत सोचता है। वह सोचता है कि मैं शराब और सुन्दरी के वश में हूँ और एक-न-एक दिन अपनी कुविचारी माँ के हाथों मेरी वही गति होगी, जो मेरे पिता फिलिप की हुई ।

संसार में सिर्फ तुम्हीं कह सकते हो कि अरस्तू गलत है। तुम यह कहकर अपनी जानें क्यों नहीं बचा लेते ? लोग कहते हैं कि तुम संसारत्यागी हो। तुम क्या वह अपनी-सी बात नहीं समझ पाते कि तुम्हारे संसार-त्याग के लिए यह जरूरी है कि तुम संसार में अधिक दिनों तक जीवित रहो ?

तुम्हारे लिए यह इतना ही जरूरी है, जितना मेरा संसार-विजय करने के लिए असंख्य वर्षों तक युवा रहना जरूरी है ?.....बताओ, क्या तुम्हारे पास ऐसा रसायन है जिससे मेरा यौवन

अमर हो सके ? मैं एक शब्द में तुमसे पूछना चाहता हूँ, क्या तुम मुझे अपने देश के देवताओं में जगह दे सकते हो ?

एक ब्राह्मण : हम तुम्हारा अभिप्राय नहीं समझे ।

दूसरा ब्राह्मण : यह तो सरासर मेरे देवताओं का अपमान है ।

सिकन्दर : अभिमानी बालको, मैंने तुम्हारे सारे पत्थर और धातुओं के देवता तोड़ डाले । मैंने तुम्हारी सारी पुस्तकों में आग लगा दी । तुम्हारे विद्रोही और असंसारी मन्दिरों में अपने सैनिक बँधवा दिये, तुम्हारी देवदासियों के गर्भ में अपनी सन्तान छोड़ दी । तुमको अब किस बात का अभिमान है ?

तीसरा ब्राह्मण : तू अपने सैन्य-बल से हमारा सम्राट् हो सकता है, लेकिन देवता ...।

सिकन्दर : (शराबियों की तरह फुसलाते हुए) तुम सोचो, इतने सारे देव-ताओं का बोझ ढोते अच्छा लगता है ? एक-न-एक दिन तुम्हारी सभ्यता जरूर इनके बोझ से टूट जाएगी । मेरी ओर देखो, क्या मैं सुन्दर नहीं हूँ ? क्या मुझमें अतिमानव की दुर्बलताएँ नहीं हैं ? क्या मैंने तुम्हें युद्ध के मैदान में परास्त नहीं किया है ? क्या मुझमें बल, साहस और देवत्व नहीं है ? क्या मैंने हजारों कुमारियों को कौमार्य-हीन नहीं किया है ?....और क्या मैं अपो-लाई को संसार की तमाम सुन्दरियों से ज्यादा प्यार नहीं करता हूँ ? बोलो, क्या मैं तुम्हारा अकेला देवता होने के योग्य नहीं हूँ ?

एक ब्राह्मण : यवन स्कन्द ! तू भूलता है, हम देवता नहीं बनाते, देवता हमें बनाते हैं—

सिकन्दर : (कटुता से मुस्कराते हुए) ठीक है । मैं तुम्हारे गर्व की कदर करता हूँ, लेकिन तुम मेरे नाम को तो इस तरह मत बिगाड़ो। मेरा नाम उसी तरह लो, जिस तरह मेरे सैनिक, मेरे देशवासी और मुझसे विजित पारसी और मनु लेते हैं ।

यू० दार्शनिक : (आगे बढ़कर) अरस्तू महान् के प्यारे ! मैं अरस्तू के नाम पर तुझसे इन ब्राह्मणों के प्राणों की भिक्षा माँगता हूँ ।

सिकन्दर : (विस्मय से) क्यों ?

यू० दार्शनिक : क्योंकि इन्होंने अपने दार्शनिक संविधान में वह हासिल कर लिया है जिसके लिए हमारा अरस्तू तरसता है। अपनी सभ्यता के उद्योग को मानवता के लोक-संगठन से अलग कर लिया है ।

सिकन्दर : लेकिन ये उद्धत हैं, ये दूरन्देश नहीं हैं ।

दूसरा सेनानी : ये स्वार्थी हैं । इनकी संस्कृति और विचार की नींव, स्वार्थ और

असभ्यता पर रखी है ।

प० सेनानी : जब हम इनके किसानों, कारीगरों और सैनिकों को नष्ट कर रहे थे, तब वह अपने निर्मम सन्तोष से चुपचाप बैठे रहे लेकिन जैसे ही हमने इनके मन्दिर का स्वर्ण और इनकी मूर्तियों के मरकतों की तरफ नजर की, ये हमारे शत्रु हो गये और उस जनता को, जिसे ये सृष्टि के आरम्भ से खसोट रहे हैं, हमसे विद्रोह करने के लिए उभारने लगे ।

ई० सेनानी : ये जीवन से प्रेम नहीं करते । मानव का मान नहीं करते । इनके जीवन की सारी उत्कंठा और तत्परता अपने देश के असमानता के हितवर्धन के लिए है । हमें इन्हें यहीं अपनी ढालों से कुचलकर मार डालना चाहिए—(दोनों सेनानी अपनी तलवारें और ढालें लेकर आगे बढ़ते हैं । ब्राह्मण वैसे ही निस्पृह खड़े रहते हैं । यूनानी दार्शनिक कुछ व्यग्र-सा, बिलकुल सिकन्दर के पास खड़ा हो जाता है ।)

यू० दार्शनिक : ब्राह्मणो, मनु-देशों के विजेता और अरस्तू महान् के इकलौते शिष्य सिकन्दर को बतलाओ कि तुम उसे अपनी देवमाला में जगह देने को तैयार नहीं हो ?

(ब्राह्मण आपस में दो क्षण कुछ सलाह करते हैं)

एक ब्राह्मण : इसका उत्तर देना राजनीति के विरुद्ध होगा । इसके अलावा हम किसी भी प्रश्न का उत्तर देने को तैयार हैं । हम प्राणदण्ड से नहीं डरते, हम उसकी बात भी सोचना नहीं चाहते ।

सिकन्दर : मैं तुमसे क्या प्रश्न करूँगा ? काश ! अरस्तू यहाँ होता । वह तुम्हारे विकृत अभिमान और दार्शनिक कुटिलता से तुम्हें मुक्त करेगा । खैर, मैं खुद तुमसे कुछ प्रश्न करूँगा ।

प० सेनानी : सिकन्दर, तू खामखाह इनके साथ समय नष्ट कर रहा है । बाहर न जाने क्या हो रहा है । न जाने इन्होंने कौन-से क्रूर षड्यन्त्र हमारे विरुद्ध रचे हैं—हमारी लोहे की प्यासी ढालें ···

सिकन्दर : मैं तुम्हीं में से एक को तुम्हारा विचारक बना दूँगा । वह इस बात का फैसला करेगा कि तुममें से किसने सबसे चतुर उत्तर दिया । और जो सबसे चतुर उत्तर देगा, उसका सिर सबसे पहले उतारा जायेगा—

(याक के सींग से फिर थोड़ी-सी शराब पीता है ।)

और अगर मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार न्यायकर्ता ने सही न्याय नहीं किया तो देवताओं के पास वही पहले पहुँचेगा ।

यू० दार्शनिक : इसकी आवश्यकता नहीं होगी फिलिप्पा के पुत्र ! मुझे विश्वास है कि इनके उत्तर सुनकर तू इनकी हत्या का विचार छोड़ देगा ।

सिकन्दर : (कुछ सोचकर) अच्छा, देवताओं की जेठी संतान ! उनके मुख से पैदा हुए घमंडी बालको ! तुम तो सृष्टि के क्रम को देवताओं की ही तरह जानते होगे । देवताओं ने पहले क्या उत्पन्न किया, विश्राम या संघर्ष—दिन या रात ?—

एक ब्राह्मण : ब्राह्मण ने रात से दिन, एक दिन पहले बनाया और वह दिन तीस कोटि योजन लम्बा था ।

(सिकन्दर अपने ओठ काटता है । यूनानी दार्शनिक मुस्कराता है ।)

सिकन्दर : अच्छा, सृष्टि और समष्टि का ब्योरेवार भेद जाननेवालो ! सृष्टि में इस समय किनकी संख्या ज्यादा है ? जीवितों की या मृतों की ?

दूसरा ब्राह्मण : यही प्रश्न जनक ने विश्वामित्र से किया था । सृष्टि में हर देश और काल में जीवित बहुसंख्यक हैं, क्योंकि मृत तो हैं ही नहीं ।

सिकन्दर : (अपने सेनानियों की ओर मुड़कर) जो भी ग्रीक, फारसी या बाक्लीय सैनिक यहाँ से वापिस नहीं जाना चाहते, उनको यहीं ठहरने या जाने की पूरी स्वतन्त्रता है । मैं और सेना का वह हिस्सा जो मेरे साथ जाना चाहता है, आज ही चल देंगे और जब तक हमारी नावें चल न दें और हवा न पकड़ लें, तुम्हारी तलवारें म्यानों के बाहर रहनी चाहिए । लाल बालसूर्य के रंग में रंगी हुई तलवारें लेकर हम इस विचित्र देश को खैर-बाद कहेंगे—(पंडितों से) यह देश जो स्वर्ग के तमाम पदार्थों से ठसाठस भरा है और जिसके वासियों ने इसे प्रत्यक्ष नरक बना रखा है ।

दोनों सेनानी : यह है हमारा सिकन्दर, जो गगनचुम्बी पर्वतों का पुत्र और झंझावातों का सहोदर है ।

(ब्राह्मणों को अपने आगे ठेलते हुए बाहर जाते हैं । सिकन्दर उतावली से धरती पर पैर पटकता है । वह और शराब चाहता है ।)

असभ्यता पर रखी है ।

प० सेनानी : जब हम इनके किसानों, कारीगरों और सैनिकों को नष्ट कर रहे थे, तब वह अपने निर्मम सन्तोष से चुपचाप बैठे रहे लेकिन जैसे ही हमने इनके मन्दिर का स्वर्ण और इनकी मूर्तियों के मरकतों की तरफ नजर की, ये हमारे शत्रु हो गये और उस जनता को, जिसे ये सृष्टि के आरम्भ से खसोट रहे हैं, हमसे विद्रोह करने के लिए उभारने लगे ।

ई० सेनानी : ये जीवन से प्रेम नहीं करते । मानव का मान नहीं करते । इनके जीवन की सारी उत्कंठा और तत्परता अपने देश के असमानता के हितवर्धन के लिए है । हमें इन्हें यहीं अपनी ढालों से कुचलकर मार डालना चाहिए—(दोनों सेनानी अपनी तलवारें और ढालें लेकर आगे बढ़ते हैं । ब्राह्मण वैसे ही निस्पृह खड़े रहते हैं । यूनानी दार्शनिक कुछ व्यग्र-सा, बिलकुल सिकन्दर के पास खड़ा हो जाता है ।)

यू० दार्शनिक : ब्राह्मणों, मनु-देशों के विजेता और अरस्तू महान् के इकलौते शिष्य सिकन्दर को बतलाओ कि तुम उसे अपनी देवमाला में जगह देने को तैयार नहीं हो ?

(ब्राह्मण आपस में दो क्षण कुछ सलाह करते हैं)

एक ब्राह्मण : इसका उत्तर देना राजनीति के विरुद्ध होगा । इसके अलावा हम किसी भी प्रश्न का उत्तर देने को तैयार हैं । हम प्राणदण्ड से नहीं डरते, हम उसकी बात भी सोचना नहीं चाहते ।

सिकन्दर : मैं तुमसे क्या प्रश्न करूँगा ? काश ! अरस्तू यहाँ होता । वह तुम्हारे विकृत अभिमान और दार्शनिक कुटिलता से तुम्हें मुक्त करेगा । खैर, मैं खुद तुमसे कुछ प्रश्न करूँगा ।

प० सेनानी : सिकन्दर, तू खामखाह इनके साथ समय नष्ट कर रहा है । बाहर न जाने क्या हो रहा है । न जाने इन्होंने कौन-से क्रूर षड्यन्त्र हमारे विरुद्ध रचे हैं—हमारी लोहे की प्यासी ढालें …

सिकन्दर : मैं तुम्हीं में से एक को तुम्हारा विचारक बना दूँगा । वह इस बात का फैसला करेगा कि तुममें से किसने सबसे चतुर उत्तर दिया । और जो सबसे चतुर उत्तर देगा, उसका सिर सबसे पहले उतारा जायेगा—

(याक के सींग से फिर थोड़ी-सी शराब पीता है ।)

और अगर मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार न्यायकर्ता ने सही न्याय नहीं किया तो देवताओं के पास वही पहले पहुँचेगा ।

यू० दार्शनिक : इसकी आवश्यकता नहीं होगी फिलिप्पा के पुत्र ! मुझे विश्वास है कि इनके उत्तर सुनकर तू इनकी हत्या का विचार छोड़ देगा ।

सिकन्दर : (कुछ सोचकर) अच्छा, देवताओं की जेठी संतान ! उनके मुख से पैदा हुए घमंडी बालको ! तुम तो सृष्टि के क्रम को देवताओं की ही तरह जानते होगे । देवताओं ने पहले क्या उत्पन्न किया, विश्राम या संघर्ष—दिन या रात ?—

एक ब्राह्मण : ब्राह्मण ने रात से दिन, एक दिन पहले बनाया और वह दिन तीस कोटि योजन लम्बा था ।

(सिकन्दर अपने ओठ काटता है । यूनानी दार्शनिक मुस्कराता है ।)

सिकन्दर : अच्छा, सृष्टि और समष्टि का ब्योरेवार भेद जाननेवालो ! सृष्टि में इस समय किनकी संख्या ज्यादा है ? जीवितों की या मृतों की ?

दूसरा ब्राह्मण : यही प्रश्न जनक ने विश्वामित्र से किया था । सृष्टि में हर देश और काल में जीवित बहुसंख्यक हैं, क्योंकि मृत तो हैं ही नहीं ।

सिकन्दर : (अपने सेनानियों की ओर मुड़कर) जो भी ग्रीक, फारसी या बाक्लीय सैनिक यहाँ से वापिस नहीं जाना चाहते, उनको यहीं ठहरने या जाने की पूरी स्वतन्त्रता है । मैं और सेना का वह हिस्सा जो मेरे साथ जाना चाहता है, आज ही चल देंगे और जब तक हमारी नावें चल न दें और हवा न पकड़ लें, तुम्हारी तलवारें म्यानों के बाहर रहनी चाहिए । लाल बालसूर्य के रंग में रंगी हुई तलवारें लेकर हम इस विचित्र देश को खैर-बाद कहेंगे—(पंडितों से) यह देश जो स्वर्ग के तमाम पदार्थों से ठसाठस भरा है और जिसके वासियों ने इसे प्रत्यक्ष नरक बना रखा है ।

दोनों सेनानी : यह है हमारा सिकन्दर, जो गगनचुम्बी पर्वतों का पुत्र और झंझावातों का सहोदर है ।

(ब्राह्मणों को अपने आगे ठेलते हुए बाहर जाते हैं । सिकन्दर उतावली से धरती पर पैर पटकता है । वह और शराब चाहता है ।)

असम्यता पर रखी है।

प० सेनानी : जब हम इनके किसानों, कारीगरों और सैनिकों को नष्ट कर रहे थे, तब वह अपने निर्मम सन्तोष से चुपचाप बैठे रहे लेकिन जैसे ही हमने इनके मन्दिर का स्वर्ण और इनकी मूर्तियों के मरकतों की तरफ नजर की, ये हमारे शत्रु हो गये और उस जनता को, जिसे ये सृष्टि के आरम्भ से खसोट रहे हैं, हमसे विद्रोह करने के लिए उभारने लगे।

ई० सेनानी : ये जीवन से प्रेम नहीं करते। मानव का मान नहीं करते। इनके जीवन की सारी उत्कंठा और तत्परता अपने देश के असमानता के हितवर्धन के लिए है। हमें इन्हें यही अपनी ढालों से कुचलकर मार डालना चाहिए—(दोनों सेनानी अपनी तलवारें और ढालें लेकर आगे बढ़ते हैं। ब्राह्मण वैसे ही निस्पृह खड़े रहते हैं। यूनानी दार्शनिक कुछ व्यग्र-सा, बिलकुल सिकन्दर के पास खड़ा हो जाता है।)

यू० दार्शनिक : ब्राह्मणो, मनु-देशों के विजेता और अरस्तू महान् के इकलौते शिष्य सिकन्दर को बतलाओ कि तुम उसे अपनी देवमाला में जगह देने को तैयार नहीं हो?

(ब्राह्मण आपस में दो क्षण कुछ सलाह करते हैं)

एक ब्राह्मण : इसका उत्तर देना राजनीति के विरुद्ध होगा। इसके अलावा हम किसी भी प्रश्न का उत्तर देने को तैयार हैं। हम प्राणदण्ड से नहीं डरते, हम उसकी बात भी सोचना नहीं चाहते।

सिकन्दर : मैं तुमसे क्या प्रश्न करूँगा? काश! अरस्तू यहाँ होता। वह तुम्हारे विकृत अभिमान और दार्शनिक कुटिलता से तुम्हें मुक्त करेगा। खैर, मैं खुद तुमसे कुछ प्रश्न करूँगा।

प० सेनानी : सिकन्दर, तू खामखाह इनके साथ समय नष्ट कर रहा है। बाहर न जाने क्या हो रहा है। न जाने इन्होंने कौन-से क्रूर षड्यन्त्र हमारे विरुद्ध रचे हैं—हमारी लोहे की प्यासी ढालें ...

सिकन्दर : मैं तुम्हीं में से एक को तुम्हारा विचारक बना दूँगा। वह इस बात का फैसला करेगा कि तुममें से किसने सबसे चतुर उत्तर दिया। और जो सबसे चतुर उत्तर देगा, उसका सिर सबसे पहले उतारा जायेगा—

(याक के सींग से फिर थोड़ी-सी शराब पीता है।)

और अगर मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार न्यायकर्ता ने सही न्याय नहीं किया तो देवताओं के पास वही पहले पहुँचेगा।

यू० दार्शनिक : इसकी आवश्यकता नहीं होगी फिलिप्पा के पुत्र! मुझे विश्वास है कि इनके उत्तर सुनकर तू इनकी हत्या का विचार छोड़ देगा।

सिकन्दर : (कुछ सोचकर) अच्छा, देवताओं की जेठी संतान! उनके मुख से पैदा हुए घमंडी बालको! तुम तो सृष्टि के क्रम को देवताओं की ही तरह जानते होगे। देवताओं ने पहले क्या उत्पन्न किया, विश्राम या संघर्ष—दिन या रात?—

एक ब्राह्मण : ब्राह्मण ने रात से दिन, एक दिन पहले बनाया और वह दिन तीस कोटि योजन लम्बा था।

(सिकन्दर अपने ओठ काटता है। यूनानी दार्शनिक मुस्कराता है।)

सिकन्दर : अच्छा, सृष्टि और समष्टि का ब्योरेवार भेद जाननेवालो! सृष्टि में इस समय किनकी संख्या ज्यादा है? जीवितों की या मृतों की?

दूसरा ब्राह्मण : यही प्रश्न जनक ने विश्वामित्र से किया था। सृष्टि में हर देश और काल में जीवित बहुसंख्यक हैं, क्योंकि मृत तो हैं ही नहीं।

सिकन्दर : (अपने सेनानियों की ओर मुड़कर) जो भी ग्रीक, फारसी या बाक्लीय सैनिक यहाँ से वापिस नहीं जाना चाहते, उनको यहीं ठहरने या जाने की पूरी स्वतन्त्रता है। मैं और सेना का वह हिस्सा जो मेरे साथ जाना चाहता है, आज ही चल देंगे और जब तक हमारी नावें चल न दें और हवा न पकड़ लें, तुम्हारी तलवारें म्यानों के बाहर रहनी चाहिए। लाल बालसूर्य के रंग में रंगी हुई तलवारें लेकर हम इस विचित्र देश को खैर-बाद कहेंगे—(पंडितों से) यह देश जो स्वर्ग के तमाम पदार्थों से ठसाठस भरा है और जिसके वासियों ने इसे प्रत्यक्ष नरक बना रखा है।

दोनों सेनानी : यह है हमारा सिकन्दर, जो गगनचुम्बी पर्वतों का पुत्र और झंझावातों का सहोदर है।

(ब्राह्मणों को अपने आगे ठेलते हुए बाहर जाते हैं। सिकन्दर उतावली से धरती पर पैर पटकता है। वह और शराब चाहता है।)

असभ्यता पर रखी है ।

प० सेनानी : जब हम इनके किसानों, कारीगरों और सैनिकों को नष्ट कर रहे थे, तब वह अपने निर्मम सन्तोष से चुपचाप बैठे रहे लेकिन जैसे ही हमने इनके मन्दिर का स्वर्ण और इनकी मूर्तियों के मरकतों की तरफ नजर की, ये हमारे शत्रु हो गये और उस जनता को, जिसे ये सृष्टि के आरम्भ से खसोट रहे हैं, हमसे विद्रोह करने के लिए उभारने लगे ।

ई० सेनानी : ये जीवन से प्रेम नहीं करते । मानव का मान नहीं करते । इनके जीवन की सारी उत्कंठा और तत्परता अपने देश के असमानता के हितवर्धन के लिए है । हमें इन्हें यहीं अपनी ढालों से कुचलकर मार डालना चाहिए—(दोनों सेनानी अपनी तलवारें और ढालें लेकर आगे बढ़ते हैं । ब्राह्मण वैसे ही निस्पृह खड़े रहते हैं । यूनानी दार्शनिक कुछ व्यग्र-सा, बिलकुल सिकन्दर के पास खड़ा हो जाता है ।)

यू० दार्शनिक : ब्राह्मणो, मनु-देशों के विजेता और अरस्तू महान् के इकलौते शिष्य सिकन्दर को बतलाओ कि तुम उसे अपनी देवमाला में जगह देने को तैयार नहीं हो ?

(ब्राह्मण आपस में दो क्षण कुछ सलाह करते हैं)

एक ब्राह्मण : इसका उत्तर देना राजनीति के विरुद्ध होगा । इसके अलावा हम किसी भी प्रश्न का उत्तर देने को तैयार हैं । हम प्राणदण्ड से नहीं डरते, हम उसकी बात भी सोचना नहीं चाहते ।

सिकन्दर : मैं तुमसे क्या प्रश्न करूँगा ? काश ! अरस्तू यहाँ होता । वह तुम्हारे विकृत अभिमान और दार्शनिक कुटिलता से तुम्हें मुक्त करेगा । खैर, मैं खुद तुमसे कुछ प्रश्न करूँगा ।

प० सेनानी : सिकन्दर, तू खामखाह इनके साथ समय नष्ट कर रहा है । बाहर न जाने क्या हो रहा है । न जाने इन्होंने कौन-से क्रूर षड्यन्त्र हमारे विरुद्ध रचे हैं—हमारी लोहे की प्यासी ढालें ···

सिकन्दर : मैं तुम्हीं में से एक को तुम्हारा विचारक बना दूँगा । वह इस बात का फैसला करेगा कि तुममें से किसने सबसे चतुर उत्तर दिया । और जो सबसे चतुर उत्तर देगा, उसका सिर सबसे पहले उतारा जायेगा—

(याक के सींग से फिर थोड़ी-सी शराब पीता है ।)

और अगर मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार न्यायकर्ता ने सही न्याय नहीं किया तो देवताओं के पास वही पहले पहुँचेगा ।

यू० दार्शनिक : इसकी आवश्यकता नहीं होगी फिलिप्पा के पुत्र ! मुझे विश्वास है कि इनके उत्तर सुनकर तू इनकी हत्या का विचार छोड़ देगा ।

सिकन्दर : (कुछ सोचकर) अच्छा, देवताओं की जेठी संतान ! उनके मुख से पैदा हुए घमंडी बालको ! तुम तो सृष्टि के क्रम को देवताओं की ही तरह जानते होगे । देवताओं ने पहले क्या उत्पन्न किया, विश्राम या संघर्ष—दिन या रात ?—

एक ब्राह्मण : ब्राह्मण ने रात से दिन, एक दिन पहले बनाया और वह दिन तीस कोटि योजन लम्बा था ।

(सिकन्दर अपने ओंठ काटता है । यूनानी दार्शनिक मुस्कराता है ।)

सिकन्दर : अच्छा, सृष्टि और समष्टि का ब्योरेवार भेद जाननेवालो ! सृष्टि में इस समय किनकी संख्या ज्यादा है ? जीवितों की या मृतों की ?

दूसरा ब्राह्मण : यही प्रश्न जनक ने विश्वामित्र से किया था । सृष्टि में हर देश और काल में जीवित बहुसंख्यक हैं, क्योंकि मृत तो हैं ही नहीं ।

सिकन्दर : (अपने सेनानियों की ओर मुड़कर) जो भी ग्रीक, फारसी या बाबलीय सैनिक यहाँ से वापिस नहीं जाना चाहते, उनको यहीं ठहरने या जाने की पूरी स्वतन्त्रता है । मैं और सेना का वह हिस्सा जो मेरे साथ जाना चाहता है, आज ही चल देंगे और जब तक हमारी नावें चल न दें और हवा न पकड़ लें, तुम्हारी तलवारें म्यानों के बाहर रहनी चाहिए । लाल बालसूर्य के रंग में रंगी हुई तलवारें लेकर हम इस विचित्र देश को खैर-बाद कहेंगे—(पंडितों से) यह देश जो स्वर्ग के तमाम पदार्थों से ठसाठस भरा है और जिसके वासियों ने इसे प्रत्यक्ष नरक बना रखा है ।

दोनों सेनानी : यह है हमारा सिकन्दर, जो गगनचुम्बी पर्वतों का पुत्र और झंझावातों का सहोदर है ।

(ब्राह्मणों को अपने आगे ठेलते हुए बाहर जाते हैं । सिकन्दर उतावली से धरती पर पैर पटकता है । वह और शराब चाहता है ।)

यू० दार्शनिक : (उन्हें रोककर) ऐ जीवन से अधिक मृत्यु के दार्शनिको ! मैं तुम्हारा जीवन न बचा सका, लेकिन मुझे तुम्हारे मरने का बहुत खेद नहीं है। मुझे विश्वास है कि तुम अन्तिम क्षण तक अपने देश और उस भविष्य के बारे में सोचोगे। हम यूनानी चिन्तक इस तरह मरना अपना सौभाग्य और मान समझते हैं।

एक ब्राह्मण : हम कोई देश नहीं जानते। यवन दार्शनिक तुम्हारे देश-प्रेम ने तुम्हारे सिकन्दर को कितना तुच्छ और लोलुप बना दिया है। विचार और चिन्तन की सीमाएँ नहीं होतीं। हमने उन्हें कभी नदियों, पहाड़ों और समुद्रों की मायावी सीमाओं से नहीं बाँधा। हमारी दर्शन-बुद्धि समय की भी दासी नहीं है।

सिकन्दर : आह ब्राह्मणो ! तुम्हारे पहाड़ों में खतरनाक दर्रे हैं और तुम्हारे क्षत्रिय भूल गये हैं कि युद्ध के लिए लोलुपता कितनी आवश्यक है। एक दिन तुम यह अवश्य जानोगे।

यू० दार्शनिक : यह सब सच है, एक दिन तुम अपने देश की मर्यादा को अवश्य जानोगे। विश्वविजयी सिकन्दर ने तुम्हारे देश के पुरातन और गम्भीर वृक्ष को एक बार झकझोर दिया है। सूखी और मरी हुई पत्तियाँ झर गयी हैं। वृक्ष में पनाह पानेवाले सहस्रों पक्षी ऊपर-ऊपर घुमड़ रहे हैं, लेकिन ब्राह्मणो ! पुरानी जर्जर पत्तियों की जगह नयी और सुन्दर पत्तियाँ आयेंगी। तुम्हारे पंछी लौट आयेंगे, वह ज्यादा चौकन्ने रहेंगे—

काश ! अरस्तू यहाँ होता ! वह तुम्हारे दर्शन में भविष्य की लीक खोज लेता। वह सिकन्दर और तुम्हारे देश दोनों को एक नयी राह दिखलाता—

सिकन्दर : ब्राह्मणो ! मैं तुम्हें तुम्हारे प्राणों की भीख दे सकता हूँ, अगर तुम उसे अरस्तू महान् के नाम पर माँगो। क्या तुम्हारे अन्दर अरस्तू से मिलने का उत्साह नहीं उपजता ?

एक ब्राह्मण : यवन स्कन्द ! तेरे प्रलोभन बेकार हैं। यह सच है कि हमारी विचार-सभ्यता संकट में है, लेकिन हम उसे नये देवता और अजनबी विचारों को ग्रहण करके नहीं बचना चाहते। यह हमारे देवताओं और हमारी सभ्यता के साथ विश्वासघात होगा।

सिकन्दर : तुम सब मुर्दे हो और घमण्डी घिनौने मुर्दे। ब्राह्मणो ! मैंने तुम्हारी सभ्यता का सारा उद्योग-बल कुचल दिया। तुम्हारे मुकुटों के रत्न चूर-चूर कर दिये। तुम्हारे राजसिंहासन बीन लिये। मैंने तुम्हारे सामूहिक जीवन में बेबसी और बेएहसासी पैदा कर दी। मैं तुम्हारा शत्रु हूँ कि मैं तुम्हारी मित्रता के योग्य समझा जाऊँ। तुम्हें विश्वास दिला सकूँ कि तुम्हें और तुम्हारे भविष्य को मेरी और अरस्तू की आवश्यकता है। इन घमण्डी नास्तिकों को यहां से हटाओ।

एक ब्राह्मण : तू हमें क्यों अपमानित कर रहा है ? तू हमें नास्तिक कहकर हमें प्राणदंड से बड़ी यातना पहुँचा रहा है।

सिकन्दर : क्योंकि नास्तिक वह नहीं है, जो देवताओं की महत्ता और उपस्थिति पर विश्वास नहीं करता, बल्कि नास्तिक वह है, जो मनुष्य की महानता पर विश्वास नहीं करता। (परिंदों-सा चीखता है) इनको ले जाओ और मुझे थोड़ी-सी शराब दो। (यूनानी सैनिक ब्राह्मणों को बाहर ले जाते हैं।)

यू० दार्शनिक : लेकिन सिकन्दर, तूने इन लोगों के साथ ऐसा बच्चों-का-सा बर्ताव क्यों किया ? तूने उनसे ऐसी बच्चों-की-सी पहेलियाँ क्यों बुझवायीं ?

सिकन्दर : (विचार-मग्न अवस्था में बाहर जाते हुए) क्योंकि उनके सामने मैं महसूस करता था कि मैं बिलकुल बच्चा हूँ।

यू० दार्शनिक : विचित्र देश है यह ! इसने संसार के सबसे पहले विश्व-विजयी को फिर से एक बालक बना दिया।

(पटाक्षेप)